# जोबनेर कृषि

मई, 2024 वर्ष : 9 अंक : 5 प्रति अंक मूल्य 25 रुपये वार्षिक शुल्क : 250 रुपये

## प्रसार शिक्षा निदेशालय

### श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय

जोबनेर, जिला–जयपुर (राज.) 303 329

# पशुओं में कृत्रिम गर्भाधानः आशा एवं चुनौतियाँ

**डॉ. विनोद भटेश्वर और डॉ. बसंत कुमार भींचर**
**सहायक प्रोफेसर, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग,**
**श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर**

**परिचय**

पशुधन खेती विश्व में पशु आधारित खाद्य उत्पादों और आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। देश में पशुधन उत्पादन में सुधार के लिए, कृत्रिम गर्भाधान जैसी तकनीकों को पशुधन विस्तार एजेंटों (एलईए) द्वारा उचित रूप से समझने और किसानों को उचित रूप से अपनाने के लिए स्थानांतरित करना होगा।

**कृत्रिम गर्भाधान क्या है**

कृत्रिम गर्भाधान प्रजनन की ऐसी विधि है जिसमें सांड के वीर्य को एक विशेष प्रकार की कृत्रिम गर्भाधान नलिका द्वारा मादा पशु की गर्भाशय ग्रीवा अथवा बच्चेदानी में मद के समय डाल दिया जाता है। यह प्रौद्योगिकियों के एक समूह में से एक है जिसे आमतौर पर ''सहायक प्रजनन प्रौद्योगिकियों'' (एआरटी) के रूप में जाना जाता है, जिससे युग्मकों (शुक्राणु और अंडाणु) के मिलन को सुविधाजनक बनाकर संतान उत्पन्न की जाती है।

यह पशुधन में सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला एआरटी है, जिसने 20वीं सदी के दौरान पशु प्रजनन उद्योग में क्रांति ला दी। चिकित्सा उपयोग के विपरीत, जहां अंतर्गर्भाशयी गर्भाधान (आईयूआई) का उपयोग कभी–कभी मानव प्रजनन उपचार में किया जाता है, ए.आई अब तक गहन रूप से रखे गए घरेलू पशुधन, जैसे डेयरी मवेशी (यूरोप और उत्तर में लगभग 80 प्रतिशत ) के प्रजनन का सबसे आम तरीका है। सूअर (यूरोप और उत्तरी अमेरिका में 90 प्रतिशत से अधिक) और टर्की (गहन उत्पादन में लगभग 100 प्रतिशत )। ए.आई घोड़ों, गोमांस मवेशियों और भेड़ों में बढ़ रहा है, और कुत्तों, बकरियों, हिरण और भैंस जैसी अन्य घरेलू प्रजातियों में भी इसकी सूचना मिली है। इसका उपयोग कभी–कभी दुर्लभ या लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण प्रजनन में भी किया जाता है, उदाहरण के लिए, प्राइमेट्स, हाथी और जंगली फेलिड्स। जानवरों में अन्य एआरटी आमतौर पर विशेषज्ञ अनुप्रयोगों या अनुसंधान उद्देश्यों तक ही सीमित हैं, क्योंकि सामान्य पशुधन प्रजनन के लिए लागत निषेधात्मक होगी।

**कृत्रिम गर्भाधान के फायदे और कमियाँ :** जानवरों में कृत्रिम गर्भाधान को मूल रूप से बीमारी के प्रसार को नियंत्रित करने के लिए विकसित किया गया था, संभोग के लिए संभावित रोगजनकों वाले जानवरों को अन्य पशु इकाईयों में ले जाने से बचने के लिए। एंटीबायोटिक युक्त वीर्य विस्तारकों के उपयोग से भी जीवाणु रोगों के संचरण को रोकने में मदद मिली। कृत्रिम गर्भाधान के फायदे और कमियां इस प्रकार हैं:

**कृत्रिम गर्भाधान के फायदे**

- ➢ कृत्रिम गर्भाधान का उपयोग मुख्य रूप में नस्ल सुधार कार्यक्रम के लिए किया जाता है। प्राकृतिक गर्भाधान द्वारा एक सॉड़ साल में 50–100 पशुओं को ही गर्भित करने की क्षमता रखता है। जबकि कृत्रिम गर्भाधान द्वारा वह साल में 5000–7000 पशुओं को गर्भित कर सकता है। इस प्रकार एक सांड़ साल में लगभग 100 सॉड़ का काम कर सकता है। कृत्रिम गर्भाधान के लिए केवल उच्च गुणवत्ता वाले सांड़ का ही चयन किया जाता है। इस प्रकार उत्तम नस्ल के सांड़ का उपयोग करके कृत्रिम विधि द्वारा उससे हजारों की संख्या में अच्छे नस्ल की संतति ली जा सकती है।
  यह प्रक्रिया सांड़ रखने से सस्ती और उत्तम है।
- ➢ कृत्रिम गर्भाधान के लिए केवल स्वस्थ सांड़ों का ही वीर्य इकट्ठा किया जाता है। इससे वीर्य जनित संक्रामक बीमारियां, गर्भपात इत्यादि अन्य पशुओं में नहीं फैल पाती हैं।
- ➢ उत्तम किन्तु सुस्त अथवा चोटिल सांड भी वीर्य संकलन करके कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग में लाये जा सकते हैं।
- ➢ सुदूर स्थित मादा पशु भी इस विधि द्वारा उत्तम सांड के वीर्य से गाभिन की जा सकती हैं।
- ➢ सांड की प्रजनन शक्ति मरणोपरांत भी अति हिमीकृत वीर्य के रूप में संरक्षित रहती है।
- ➢ पशु के गर्मी में आने पर सांड की खोज के लिए इधर–उधर भटकना नहीं पड़ता है।
- ➢ पशु के गर्मी में होने पर भी कुछ सांड सुस्त होने के कारण पशु पर चढ़ नहीं पाते तथा कुछ सॉड़ पशु के गाभिन होने पर भी उस पर चढ़ जाते हैं। कृत्रिम गर्भाधान द्वारा ऐसी विषम परिस्थितियों से बचा जा सकता है, क्योंकि पशु को पूरी तरह जाँचने के बाद ही कृत्रिम गर्भाधान किया जाता है। इस दौरान जनन संबंधी गड़बड़ियों की पहचान करके उनका जल्द इलाज भी सम्भव है।

**कृत्रिम गर्भाधान तकनीक की कमियाँ :**

- ➢ कृत्रिम गर्भाधान के लिए उपयोग किये जाने वाले सांडों का अगर कुशलतापूर्वक चयन नहीं किया गया तो बड़े पैमाने पर नस्ल सुधार की हानि हो सकती है।
- ➢ इस तकनीक के लिए प्रशिक्षित एवं अनुभवी कार्यकर्ता एवं विशेष यंत्रों की आवश्यकता होती है जो प्रायः सभी स्थानों या क्षेत्र में उपलब्ध नहीं होते।
- ➢ कृत्रिम गर्भाधान कार्यकर्ता को इस तकनीक का तथा मादा पशुओं के जननांगो की बेहद अच्छी जानकारी होनी चाहिए।
- ➢ इस तकनीक से अनुवांशिक बीमारियाँ फैलने की संभावना रहती है।
- ➢ कृत्रिम गर्भाधान में अधिक श्रम और बुनियादी सुविधाओं की जरुरत होती है।
- ➢ इस विधि में अगर तकनीक एवं सफाई का सही ध्यान नहीं रखा जाता है तो बीमारियों के फैलने का खतरा बना रहता है। अगर हिमीत वीर्य की गुणवत्ता अच्छी न हो तो गर्भधारण क्षमता प्रभावित हो सकती है।

**गर्भाधान का उचित समय :** मादा पशु में गर्मी के लक्षण शुरू होने के लगभग 12 घंटे पश्चात् कृत्रिम गर्भाधान करवाना उचित होता है। यदि पशु में गर्मी के लक्षण सुबह दिखाई दें तो शाम को कृत्रिम गर्भाधान करवाया जाये और यदि शाम को गर्मी के लक्षण दिखाई दे तो अगले दिन सुबह कृत्रिम गर्भाधान करवाना उचित होता है। कुछ पशुओं में 3–4 दिनों तक गर्मी के लक्षण दिखाई देते हैं ऐसे पशुओं को लगातार 2–3 दिनों तक कृत्रिम गर्भाधान करवाए। ग्रीष्म काल में भैंसे गर्मी में कम आती हैं इसलिए भैंसों के ब्यांत का मौसम भी गर्मियों के बाद शुरू होता है। गर्मियों में भैंसों को गर्मी में लाने के लिए विशेष उपचार किया जाता है तथा कृत्रिम गर्भाधान द्वारा गर्भित करवाया जाता है। इस प्रकार विशेष उपचार द्वारा पशुओं को समयानुसार गर्भित करवाकर गर्मी के दिनों में दुग्ध उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है, जिससे पशुपालकों को काफी लाभ हो सकता है।

**कृत्रिम गर्भधान क्यों ?**

हमारे देश की जनसंख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है तथा आवासीय क्षेत्र तेजी से बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार पशुओं के लिए खुली चरागाह लगभग समाप्त हो चुकी है। पहले पशुओं को खुले चरागाहों में चराया जाता था। उनके साथ सांड और झोटे भी रखे जाते थे तथा चारे की समस्या नहीं होती थी। लेकिन आज के दौर में पशुओं को लगभग खूंटे से बाँधकर ही घरों और डेयरियों में रखा जाता है। जिससे सांड और झोटे

रखना पशुपालक के लिए अनावश्यक बोझ बन जाता है। कृत्रिम गर्भाधान विधि का विकास होने के साथ सांड और झोटे रखने की जरूरत नहीं होती। सॉड और झोटे की प्रोजनी टेस्टिंग केवल कृत्रिम गर्भाधान द्वारा ही संभव है जिससे हम सांड और झोटे की गुणवत्ता की जांच कर सकते हैं।

- ➢ कृत्रिम गर्भाधान करने की सबसे प्रचलित विधि मलाशय योनि (Recto vaginal method) विधि है। आजकल हर जगह हिमीत वीर्य के सहारे ही कृत्रिम गर्भाधान किया जाता है। इस विधि में प्रयोग किये जाने वाले यंत्र को कृत्रिम गर्भाधान गन (AI gun) कहते हैं।
- ➢ पशु को अगाड़े में बाँध कर नियंत्रित करते हैं तथा उसके बाहरी जननांग को एक विसंक्रमित रुई से साफ करते हैं।
- ➢ एक हाथ में दास्ताने पहनकर उसे चिकना करते है तथा सावधानीपूर्वक हाथ मलाशय के अन्दर डालते है और ग्रीवा को पकड़ते हैं।
- ➢ पशु के भगोस्ट को फैला कर दुसरे हाथ से योनि के रास्ते कृत्रिम गर्भाधान गन 45 डिग्री कोण पर अन्दर डालते हैं।
- ➢ फिर धीरे धीरे गर्भाधान गन को ग्रीवा (Cervix) के अन्दर ले जाते हैं और ग्रीवा को पार करके गर्भाशय शरीर में जाकर वीर्य को छोड़ देते है।

**कृत्रिम गर्भाधान तकनीक द्वारा उच्च गर्भधारण दर प्राप्त करने हेतु पशुपालकों को सुझाव**

- ➢ पशुपालकों को अधिक से अधिक कृत्रिम गर्भाधान विधि को अपनाना चाहिए क्योंकि अक्सर गाँव में जो प्रजनक सॉड होता है वह कई गायों से मैथुन करता है और अगर कोई गाय संक्रमित हो तो मैथुन सम्बन्धी रोगों जैसे ट्रायकोमोनिएसिस, केम्पाइलोबेक्टेरियोसीस इत्यादि को फैला सकता है। इन रोगों से पशु की प्रजनन क्षमता पर कुप्रभाव पड़ता है। इन रोगों से बचाव हेतु किसान भाईयों को अपने पशुओं में कृत्रिम गर्भाधान तकनीक का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इस तकनीक में उन्नत नस्ल के स्वस्थ परीक्षित सॉडों का वीर्य उपयोग में लाया जाता है।
- ➢ अगर पशुपालक बछिया या कटिया का गर्भाधान करवा रहे हो तो उन्हें उनका शारीरिक वजन जरूर ध्यान में रखना चाहिए। जब डेयरी पशु अपने व्यस्क शारीरिक भार का 60 प्रतिशत भार प्राप्त कर ले तब पशुपालक को उनका गर्भाधान कराना चाहिए।

पशुपालक को अपने पशु के मदकाल अथवा गर्मी (हीट) में होने के लक्षणों की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए ताकि वो सही समय पर अपने डेयरी पशु का गर्भाधान करा सके। वो सारे लक्षण निम्नलिखित है:

- ➢ मदकाल की अवस्था में गाय अपनी साथी गाय अथवा सॉड के अपने ऊपर चढ़ने के समय शांत भाव से खड़ी रहती है। यह मदकाल की अवस्था का स्पष्ट लक्षण होता है। अगर गाय मदकाल में नहीं है तो वो दूसरे पशु को चढ़ने की अनुमति नहीं देगी। इस तरह का मद व्यवहार भैंसों में कम देखने को मिलता है।
- ➢ डेयरी पशु जोर–जोर से रंभाता एवं आवाजे देता है। इसकी तीव्रता भैंसों में कम होती है।
- ➢ पशु के योनि द्वार से पारदर्शी तरल श्लेष्मा का स्राव होता है जो एक चमकदार डोरी के रूप में लटकता रहता है।
- ➢ पशु के योनि द्वार में सूजन हो जाती है तथा योनि श्लेष्मा झिल्ली की लालिमा बढ़ जाती है। पशु जोर–जोर से रंभाता है।
- ➢ डेयरी पशु मदकाल की अवस्था में दुसरे पशुओं को सूंघता, चाटता एवं पूंछ उठाता रहता है।
- ➢ मदकाल की अवस्था में पशु बार–बार मूत्रत्याग करता है, आहार कम खाता है तथा उसका दुग्ध उत्पादन भी घट जाता है।
- ➢ सामान्यतः गाय हर इक्कीसवें दिन मदकाल/गर्मी में आती है। मदकाल/गर्मी की अवस्था लगभग 12–24 घंटे तक बनी रहती है। पहली बार मदकाल प्रदशित करने वाली बछिया या कटिया में पहले एक या दो मदकाल को छोड़ देना चाहिए तथा उसके बाद आयी हुई मदकाल में ही उनका गर्भाधान कराना चाहिए।

**कृत्रिम गर्भाधान के लिये जरूरी सावधानियाँ**

कृत्रिम गर्भाधान से गर्भधारण दर अधिक हो इसके लिए निम्नलिखित बातों पर अमल जरूर करें :

- ➢ गर्भाधान उच्च गुणवत्ता वाले वीर्य से उचित समय पर व उचित तकनीक द्वारा करायें।
- ➢ अतिहिमीकृत वीर्य की स्ट्रा को तरल नाइट्रोजन से निकालकर आधे से एक मिनट के लिए गुनगुने (37 से 40°C) पानी में अवश्य डाला गया हो।
- ➢ कृत्रिम गर्भाधान से पहले भैंस की योनि का बाहरी भाग अच्छी तरह साफ कर लें।
- ➢ कृत्रिम गर्भाधान से पहले तथा बाद में पशु के साथ नरमी बरतें। उसकी पिटाई न करें तथा दौड़ायें नहीं।
- ➢ पशु को गर्म वातावरण में न रखें। कम से कम 15 दिनों तक उसे छायादार जगह पर बाँधें। गर्म वातावरण गर्भाशय में शुक्राणुओं की क्रियाशीलता को कम कर देता है तथा भ्रूण के विकास को रोकता है। इससे भ्रूण मर भी सकता है।
- ➢ टीका लगवाने के लगभग 19–23वें दिन के दौरान भैंस पर अधिक नजर रखें कि भैंस गाभिन न होने के कारण दोबारा गर्मी में तो नहीं है।
- ➢ पशु को संतुलित आहार खिलायें। आहार में 40–50 ग्राम खनिज लवण मिश्रण जरूर मिलायें।
- ➢ वीर्य का टीका लगवाने के दो महीने बाद पशु चिकित्सक से भैंस के गर्भ ठहरने की जाँच करवायें।

भैंस को गाभिन कराने के लिए किसान भाई ज्यादातर प्राकृतिक विधि द्वारा गर्भाधान कराते हैं। एक अनुमान के अनुसार कृत्रिम गर्भाधान केवल 100 प्रतिशत भैंसों में जबकि प्राकृतिक गर्भाधान 90 प्रतिशत भैंसों में इस्तेमाल होता है।

सांड किसी अच्छे प्रजनन फार्म से खरीदें जहाँ पर माँ के दूध का रिकार्ड रखा जाता हो। सॉड़ को किसी अनजान स्रोत से बिल्कुल न खरीदें।

- ➢ सांड की माँ के एक ब्यांत का दूध रिकार्ड कम से कम 2000 कि0ग्रा0 अवश्य होना चाहिए।
- ➢ सॉड़ में उसकी नस्ल के सभी गुण मौजूद होने चाहिए।
- ➢ सॉड़ के पावों में चोट न लगी हो तथा चलने में शान हो। पावों का मज़बूत होना अति आवश्यक है।
- ➢ सॉड़ का स्वास्थ्य अच्छा हो तथा सॉड किसी संक्रामक रोग से पीड़ित न हो।
- ➢ सॉड़ के दोनों वृषण हों जो समान आकार के हों, आपस में चिपके हुए न हों तथा उनमें कोई सूजन न हो। वृषण का आकार जितना बड़ा होगा, सॉड़ की जनन क्षमता उतनी ही अधिक होगी व इसकी संतति की जनन क्षमता भी अधिक होगी।
- ➢ सांड का लिंग प्राकृतिक गर्भाधान कराते समय पूरा निकलना चाहिये तथा भैंस को गाभिन करने में वह पूर्ण समर्थ हो।
- ➢ ऐसे सॉड़ का इस्तेमाल न करें जिसकी माँ को कोई आनुवंशिक

रोग/बीमारी हो या माँ फूल दिखाती हो, लम्बे अन्तराल में बच्चा देती हो, अथवा उसे बार–बार थनैला रोग होता हो।

- ऐसे सॉड़ को न खरीदें जिसकी मैथुन इच्छा में कमी हो।

**निष्कर्ष :** ए.आई ने 20वीं सदी में पशु प्रजनन में क्रांति ला दी, विशेष रूप से शुक्राणु क्रायोप्रिजर्वेशन के संयोजन में। ए.आई उद्योग ने पिछले कुछ दशकों में अधिकांश घरेलू प्रजातियों में नाटकीय रूप से विकास किया है और इसका उपयोग अब गहन पशु उत्पादन में व्यापक है। शुक्राणु चयन और लिंग चयन जैसी अन्य संबद्ध प्रौद्योगिकियों के विकास से भविष्य में घरेलू पशुधन प्रजनन और संरक्षण के प्रयोजनों के लिए शक्तिशाली उपकरण तैयार होने की भविष्यवाणी की गई है। यह सुझाव दिया गया है कि ए.आई (जानवरोंमें) एक नए युग में प्रवेश कर रहा है जहां इसका उपयोग वर्तमान और नई शुक्राणु प्रौद्योगिकियों के कुशल अनुप्रयोग के लिए किया जाएगा। ए.आई खुराक में शुक्राणु की गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ क्रायोप्रिजर्वेशन के दौरान शुक्राणु के अस्तित्व को बढ़ाने के लिए सिंगल लेयर सेंट्रीफ्यूजेशन जैसी उभरती तकनीकों द्वारा रोमांचक संभावनाएं पेश की जाती हैं।

# जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव

**राजेश चौधरी[1], रोशन चौधरी[2] एवं अमित कुमावत[3]**

**[1]विद्या वाचस्पति छात्र, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर**

**[2]उपनिदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर**

**[3]सहायक आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर**

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक मुद्दे के रूप में उभर कर आया है। जलवायु परिवर्तन कोई एक देश या राष्ट्र से संबंधित अवधारणा नहीं है अपितु यह एक वैश्विक अवधारणा है जो समस्त पृथ्वी के लिए चिंता का कारण बनती जा रही है। देखा जाए तो जलवायु परिवर्तन से भारत सहित पूरी दुनिया में बाढ़, सूखा, कृषि संकट एवं खाद्य सुरक्षा, बीमारियां, प्रवासन आदि का खतरा बढ़ा है। जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को देखना बहुत जरूरी हो जाता है। ग्लोबल क्लाइमेट रिस्क इंडेक्स 2021 के अनुसार, भारत जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित दस शीर्ष देशों में शामिल है। जलवायु की बदलती परिस्थितियां कृषि को सबसे अधिक प्रभावित कर रहीं हैं क्योंकि लम्बे समय में ये मौसमी कारक जैसे तापमान, वर्षा, आर्द्रता आदि पर निर्भर करती है।

**जलवायु परिवर्तन कृषि को कई प्रकार से प्रभावित कर सकता है जैसे–**

**उत्पादन में कमी :** ग्लोबल वार्मिंग के कारण विश्व कृषि इस सदी में गंभीर गिरावट का सामना कर रही है। जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल के अनुसार, वैश्विक कृषि पर जलवायु परिवर्तन का कुल प्रभाव नकारात्मक होगा। हालांकि कुछ फसल इससे लाभान्वित भी होंगी किन्तु फसल उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन का कुल प्रभाव सकारात्मक से ज्यादा नकारात्मक होगा। भारत में 2010–2039 के बीच जलवायु परिवर्तन के कारण लगभग 4.5 प्रतिशत से 9 प्रतिशत के बीच उत्पादन के गिरने की संभावना है। एक शोध के अनुसार, यदि वातावरण का औसत तापमान 1 डिग्री सेल्सियस बढ़ता है तो इससे गेहूं का उत्पादन 17 प्रतिशत तक कम हो सकता है। इसी प्रकार 2 डिग्री सेल्सियस तापमान बढ़ने से धान का उत्पादन भी 0.75 टन प्रति हेक्टेयर कम होने की संभावना है।

**कृषि योग्य परिस्थितियों में कमी :** जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान के उच्च अक्षांश की ओर खिसकने से निम्न अक्षांश प्रदेशों में कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। भारत के जल स्रोत तथा भंडार तेजी से सिकुड़ रहे हैं जिससे किसानों को परम्परागत सिंचाई के तरीके छोड़कर पानी की खपत कम करने वाले आधुनिक तरीके एवं फसल अपनानी होंगी। ग्लेशियर के पिघलने से कई बड़ी नदियों के जल संग्रहण क्षेत्र में दीर्घावधिक रूप से कमी आ सकती है जिससे कृषि एवं सिंचाई में जलाभाव से गुजरना पड़ सकता है। एक रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन की वजह से प्रदूषण, भू–क्षरण और सूखा पड़ने से पृथ्वी के तीन चौथाई भूमि क्षेत्र की गुणवत्ता कम हो गई है।

**औसत तापमान में वृद्धि :** जलवायु परिवर्तन के कारण पिछले कई दशकों में तापमान में वृद्धि हुई है। औद्योगीकरण के प्रारंभ से अब तक पृथ्वी के तापमान में लगभग 0.7 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो चुकी है। कुछ पौधे ऐसे होते हैं जिन्हें एक विशेष तापमान की आवश्यकता होती है। वायुमंडल के तापमान बढ़ने पर उनके उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जैसे गेंहू, सरसो, जौ और आलू आदि इन फसलों को कम तापमान की आवश्यकता होती है जबकि तापमान का बढ़ना इनके लिए हानिकारक होता है। इसी प्रकार अधिक तापमान बढ़ने से मक्का, ज्वार और धान आदि फसलों का क्षरण हो सकता है क्योंकि अधिक तापमान के कारण इन फसलों में दाना नहीं बनता अथवा कम बनता है। इस प्रकार तापमान की वृद्धि इन फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

**वर्षा के पैटर्न में बदलाव :** भारत का दो तिहाई कृषि क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है और कृषि की उत्पादकता वर्षा एवं इसकी मात्रा पर निर्भर करती है। वर्षा की मात्रा व तरीकों में परिवर्तन से मृदा क्षरण और मिट्टी की नमी पर प्रभाव पड़ता है। जलवायु के कारण तापमान में वृद्धि से वर्षा में कमी होती है जिससे मिट्टी में नमी समाप्त होती जाती है। इसके अतिरिक्त तापमान में कमी व वृद्धि होने का प्रभाव वर्षा पर पड़ता है जिस कारण भूमि में अपक्षय और सूखे की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं। ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव कुछ वर्षों से गहन रूप से प्रभावित कर रहे हैं। मध्य भारत 2050 तक शीत वर्षा में 10 से 20 प्रतिशत तक कमी अनुभव करेगा। पश्चिमी अर्धमरुस्थलीय क्षेत्र द्वारा सामान्य वर्षा की अपेक्षा अधिक वर्षा प्राप्त करने की संभावना है। इसी प्रकार मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में तापमान में वृद्धि एवं वर्षा में कमी से चाय की फसल में कमी हो सकती है।

**कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धिः** कार्बन डाइऑक्साइड गैस वैश्विक तापमान में लगभग 60 प्रतिशत की भागीदारी करती है। कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि व तापमान में वृद्धि से पेड़–पौधों तथा कृषि पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। पिछले 30–50 वर्षों के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा लगभग 450 पीपीएम (प्वाइंट्स पर मिलियन) तक पहुँच गयी है। हालांकि कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि कुछ फसलों जैसे गेहूं तथा चावल के लिए लाभदायक है क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को तीव्र करती है और वाष्पीकरण के द्वारा होने वाली हानियों को कम करती है। परन्तु इसके बावजूद कुछ मुख्य खाद्यान्न फसलों जैसे गेंहू की उपज में काफी गिरावट आई है जिसका कारण कार्बन डाइऑक्साइड की वृद्धि ही है अर्थात तापमान में वृद्धि।

**कीट एवं रोगों में वृद्धिः** जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों और रोगाणुओं में वृद्धि होती है। गर्म जलवायु में कीट–पतंगों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है जिससे कीटों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है

और इसका कृषि पर काफी दुष्प्रभाव पड़ता है। साथ ही कीटों और रोगाणुओं को नियंत्रित करने की कीटनाशकों का प्रयोग भी कहीं ना कहीं कृषि फसल के लिए नुकसानदायक ही होता है। हालांकि कुछ अधिक सूखा–सहिष्णु फसलों को जलवायु परिवर्तन से लाभ हुआ है। ज्वार की पैदावार, जिसका खाद्यान्न के रूप में प्रयोग दुनिया में विकासशील देश के अधिकांश लोग करते हैं, 1970 के दशक के बाद पश्चिमी, दक्षिणी और दक्षिण–पूर्वी एशिया में लगभग 0.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। उप सहारा अफ्रीका में 0.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। किन्तु यदि कुछ फसलों को छोड़ दिया जाए तो, कुल फसल उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव नकारात्मक ही पड़ता है।

**कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के उपाय:** खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार, 2050 तक विश्व की जनसंख्या लगभग 9 अरब हो जाएगी। जिससे खाद्यान्न की आपूर्ति और मांग के बीच अंतर को कम करने के लिए मौजूदा खाद्यान्न उत्पादन को दोगुने करने की आवश्यकता पड़ेगी। इसके लिए भारत जैसे षि प्रधान देशों को अभी से नये उपाय करने होंगे। हमारी कृषि व्यवस्था को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से बचाने के अनेक उपाय हैं। जिन्हें अपनाकर कुछ हद तक कृषि पर जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव को कम किया जा सकता है। साथ ही पर्यावरण मैत्री तरीकों का प्रयोग करके कृषि को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल किया जा सकता है। कुछ प्रमुख उपाय निम्न प्रकार हैं:

**वर्षा जल के उचित प्रबंधन द्वारा :** वातावरण के तापमान में वृद्धि के साथ साथ फसलों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है। ऐसी स्थिति में जमीन का संरक्षण व वर्षा जल को एकत्रित करके सिंचाई हेतु प्रयोग में लाना एक उपयोगी कदम साबित हो सकता है। वाटर शेड प्रबंधन के माध्यम से हम वर्षा जल को संचित करके सिंचाई के रूप में उपयोग कर सकते हैं। इससे एक ओर हमें सिंचाई में मदद मिलेगी, वहीं दूसरी ओर भू–जल पुनर्भरण में भी सहायक सिद्ध होगा।

**जैविक एवं मिश्रित कृषि :** रासायनिक खेती से हरित गैसों में वृद्धि होती है जो वैश्विक तापन में सहायक होती हैं। इसके अलावा रासायनिक खाद व कीटनाशकों के प्रयोग से जहाँ एक ओर मृदा की उत्पादकता घटती है वहीं दूसरी ओर मानव स्वास्थ्य को भी भोजन के माध्यम से नुकसान पहुँचाती है। अतः इसलिए जैविक कृषि की तकनीकों पर अधिक जोर देना चाहिए। एकल कृषि के स्थान पर मिश्रित (समग्रित) कृषि लाभदायक होती है। मिश्रित कृषि में विविध फसलों का उत्पादन किया जाता है। जिससे उत्पादकता के साथ साथ जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होने की संभावना नगण्य हो जाती है।

**फसल उत्पादन में नई तकनीकों का विकास :** जलवायु परिवर्तन के गंभीर प्रभावों को ध्यान में रखते हुए ऐसे बीज और नई किस्मों का विकास किया जाए जो नये मौसम के अनुकूल हो। हमें फसलों के प्रारूप तथा उनके बीज बोने के समय में भी परिवर्तन करना होगा। ऐसी किस्मों को विकसित करना होगा जो अधिक तापमान, सूखे तथा बाढ़ जैसी संकटमय परिस्थितियों को सहन करने में सक्षम हों। पारम्परिक ज्ञान तथा नई तकनीकों के समन्वयन और समावेशन द्वारा मिश्रित खेती तथा इंटरक्रोपिंग करके जलवायु परिवर्तन के खतरों से निपटा जा सकता है।

**जलवायु स्मार्ट कृषि (क्लाइमेट स्मार्ट एग्रीकल्चर)** :देश में जलवायु स्मार्ट कृषि विकसित करने की ठोस पहल की गयी है जिसके लिए राष्ट्रीय परियोजना भी लागू की गई है। दरअसल जलवायु स्मार्ट कृषि जलवायु परिवर्तन की तीन परस्पर चुनौतियों से निपटने की कोशिश करती है उत्पादकता और आय बढाना, जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होना तथा कम उत्सर्जन करने में योगदान करना। उदाहरण के लिए, यदि सिंचाई की बात करें तो जल के उचित इस्तेमाल के लिए सूक्ष्म सिंचाई (माइक्रो इरिगेशन) को लोकप्रिय बनाना। जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन होना यह दर्शाता है कृषि को जलवायु परिवर्तन सहन करने हेतु सक्षम बनाना। जलवायु परिवर्तन के अनुमानित प्रभावों से कृषि क्षेत्रों की पहचान करनी होगी। इसके साथ ही इस प्रकार नीतियों का माहौल तैयार करना जिससे स्थानीय व राष्ट्रीय संस्थानों तक सफल क्रियान्वयन हो।

**इसी दिशा में भारत सरकार द्वारा किये गए प्रयास :** भारत में सबसे पहले जलवायु परिवर्तन के प्रति स्वयं को अनुकूलित करने तथा सतत विकास मार्ग के द्वारा आर्थिक और पर्यावरणीय लक्ष्यों को एक साथ हासिल करने का प्रयास किया गया है। इसी से प्रेरित होकर प्रधानमन्त्री ने 2008 में जलवायु परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय कार्ययोजना जारी की। जलवायु परिवर्तन पर निर्मित आठ राष्ट्रीय एक्शन प्लान में से एक(राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन) कृषि क्षेत्र पर भी केंद्रित है।

**राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन :** राष्ट्रीय सतत कृषि मिशन वर्ष 2008 में शुरू किया गया। यह मिशन 'अनुकूलन' पर आधारित है। इस मिशन द्वारा भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक प्रभावी एवं अनुकूल बनाने हेतु कार्य नीति बनाई गई। इस मिशन के उद्देश्यों में कुछ प्रमुख बातों पर ध्यान दिया गया है जैसे, कृषि से अधिक उत्पादन प्राप्त करना, टिकाऊ खेती पर जोर देना, प्रातिक जल–स्रोतों व मृदा संरक्षण पर ध्यान देना, फसल व क्षेत्रानुसार पोषक प्रबंधन करना, भूमि–जल गुणवत्ता बनाए रखना तथा शुष्क कृषि को बढ़ावा देना इत्यादि। इसके साथ ही वैकल्पिक कृषि पद्धति को भी अपनाया जाएगा और इसके तहत जोखिम प्रबंधन, कृषि संबंधी ज्ञान सूचना व प्रौद्योगिकी पर विशेष बल दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त, मिशन को परम्परागत ज्ञान और अभ्यास प्रणालियों, सूचना प्रौद्योगिकी, भू–क्षेत्रीय और जैव प्रौद्योगिकियों के सम्मिलन व एकीकरण से सहायता मिलेगी।

**जलवायु अनुरूप कृषि पर राष्ट्रीय पहल :** यह राष्ट्रीय पहल, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का एक नेटवर्क प्रोजेक्ट है जोकि फरवरी 2011 में आया था। इस प्रोजेक्ट का उद्देश्य रणनीतिक अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी प्रदर्शन द्वारा जलवायु परिवर्तन एवं जलवायु सुभेद्यता के प्रति भारतीय कृषि की सहन क्षमता को बढ़ाना है। इसी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास को उच्च प्राथमिकता पर रखा है। इस प्रोजेक्ट के अन्तर्गत निम्न 4 अवयव आते हैं–

1. रणनीतिक अनुसंधान
2. प्रौद्योगिकी प्रतिपादन
3. प्रायोजित एवं प्रतियोगी अनुदान
4. क्षमता निर्माण

इसके प्रमुख बिन्दुओं में भारतीय कृषि (फसल, पशु इत्यादि) को जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति सक्षम बनाना, जलवायु सह्य कृषि अनुसंधान में लगे वैज्ञानिकों व दूसरे हितधारको की क्षमता का विकास करना तथा किसानों को वर्तमान जलवायु खतरे के अनुकूलन हेतु प्रौद्योगिकी पैकेज का प्रदर्शन कर दिखाने का उद्देश्य रखा गया है। अतः कहा जा सकता है कि जलवायु परिवर्तन वैश्विक और भारतीय षि व्यवस्था पर वृहद स्तर पर प्रभाव डालता है। ऊपर दिये गए सुझावों व तकनीकों को अपनाकर कृषि व्यवस्था को जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव से बचाया जा सकता है। ऐसा करना वर्तमान समय की आवश्यकता है अन्यथा भविष्य में इसके घातक परिणाम झेलने पड़ सकते हैं। इसी दिशा में अर्थात भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल और सक्षम बनाने

में भारत सरकार द्वारा किये गए प्रयास भी सराहनीय हैं। इस प्रकार कृषि को जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बचाने के लिए हमें मिल–जुलकर पर्यावरण मैत्री तरीकों को अहमियत देनी होगी ताकि हम अपने प्राकृतिक संसाधन को बचा सकें और कृषि व्यवस्था को अनुकूलनीय बना सकें।

# ग्रीष्मकालीन जुताई द्वारा मृदा प्रबंधन

**सुशीला ऐचरा[1], सुरेन्द्र सिंह [2] एवं पार्वती दीवान[1]**
**सहायक आचार्य[1] ( कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली )**
**आचार्य[2] ( कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली )**

**परिचय :** ग्रीष्मकालीन जुताई रबी फसलों की कटाई के पश्चात की गहरी जुताई को कहा जाता हैं। फसल की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए रबी की फसल की कटाई के तुरन्त बाद गहरी जुताई कर ग्रीष्म ऋतु में खेत को खाली रखना बहुत ही लाभदायक रहता है। ग्रीष्मकालीन जुताई करने से खेत के खुलने से प्रति की कुछ प्रातिक क्रियाएं भी सुचारू रूप से खेत की मिट्टी पर प्रभाव डालती हैं। वायु और सूर्य की किरणों का प्रकाश मिट्टी के खनिज पदार्थो को पौधों के भोजन बनाने मे ं अधिक सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त खेत की मिट्टी के कणों की संरचना, बनावट भी दानेदार हो जाती है। जिससे भूमि में वायु संचार एवं जल धारण क्षमता बढ जाती है। ग्रीष्मकालीन जुताई से गर्मी में तेज धूप से खेत के नीचे की सतह पर पनप रहे कीड़े–मकोड़े बीमारियों के जीवाणु खरपतवार के बीज आदि मिट्टी के ऊपर आने से खत्म हो जाते हैं साथ ही जिन स्थानों या खेतों में गेहूं व जौ की फसल में निमेटोड का प्रयोग होता है वहां पर इस रोग की गांठें जो मिट्टी के अन्दर होती है जो जुताई करने से ऊपर आकर कड़ी धूप से मर जाती है।

**ग्रीष्मकालीन जुताई कब ?**

ग्रीष्मकालीन जुताई रबी मौसम की फसलें कटने के बाद शुरू होती हैं जो बरसात शुरू होने पर समाप्त होती है। अर्थात् अप्रैल से जून माह तक ग्रीष्मकालीन जुताई की जाती है। जहां तक हो सके किसान भाईयों को गर्मी की जुताई रबी की फसल कटने के तुरन्त बाद मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करना चाहिए।

**ग्रीष्मकालीन जुताई क्यों ?**

- ➢ मिट्टी में कार्बनिक पदार्थो की बढ़ोतरी होती है।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई कीट एवं रोग नियंत्रण में सहायक है क्योकि हानिकारक कीड़े तथा रोगों के रोगकारक मृदा की सतह पर आ जाते हैं और तेज धूप से नष्ट हो जाते हैं।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई से बरसात के पानी द्वारा खेत की मिट्टी कटाव में भारी कमी होती है अर्थात् अनुसंधान के परिणामों में यह पाया गया है कि गर्मी की जुताई करने से भूमि के कटाव में 66.5 प्रतिशत तक की कमी आती है।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई खरपतवार नियंत्रण में भी सहायक है, कॉंस, मोथा आदि के उखड़े हुए भागों को खेत से बाहर फेंक देते हैं। अन्य खरपतवार उखड़ कर सूख जाते हैं। खरपतवारों के बीज गर्मी व धूप से नष्ट हो जाते हैं।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई से मिट्टी में जीवाणु की सक्रियता बढ़ती है तथा यह दलहनी फसलों के लिए अधिक उपयोगी है।
- ➢ मिट्टी के पलट जाने से जलवायु का प्रभाव सुचारू रूप से मिट्टी में होने वाली प्रतिक्रियाओं पर पड़ता है और वायु तथा सूर्य के प्रकाश की सहायता से मिट्टी में विद्यमान खनिज अधिक सुगमता से पौधे के भोजन में बदल जाते हैं।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई से गोबर की खाद व अन्य कार्बनिक पदार्थ भूमि में अच्छी तरह मिल जाते हैं जिससे पोषक तत्व आसानी से फसलों को उपलब्ध हो जाते है।

**ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई कैसे ?**

- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई हर तीन वर्ष में एक बार जरूर करना चाहिए।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई प्रत्येक वर्ष पूरे खेत में करें यह आवश्यक नहीं है। इसका एक सरल उपाय है कि सम्पूर्ण खेत को 3 भागों में विभाजित कर लें और प्रत्येक वर्ष 1 भाग की गहरी जुताई करें। इस प्रकार प्रत्येक तीन वर्ष के अंतराल से प्रत्येक भाग की जुताई होती रहेगी तथा जुताई का खर्च भी तीन भागों में बंट जायेगा।
- ➢ ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई लगभग 25–30 सेमी0 गहरी करनी चाहिए, अधिकांश किसान एक निश्चित गहराई पर (15–16 सेमी.) जुताई करते हैं, जिससे वर्षा के कुछ समय बाद जल का अपवाह प्रारंभ हो जाता है।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई खेत की ढाल की विपरीत दिशा में करना चाहिए।
- ➢ फसल की कटाई के बाद खेत में जुताई के लिए पर्याप्त नमी होनी चाहिए, अर्थात फसल कटाई के तुरंत बाद जुताई करें। इससे जुताई अच्छी तरह से होती है, ईंधन की खपत कम होती है तथा उपकरण की आयु में भी बढ़ोतरी होती है।
- ➢ ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करते समय खेत की मृदा के बड़े–बड़े ढेले बनाने चाहिए। नलों से वर्षा जल का अंतःसरण अधिक मात्रा में होता है, जिससे भू–जल स्तर में भी वृद्धि होती है।
- ➢ हल्की व रेतीली जमीन में ज्यादा जुताई न करें। इससे मृदा भुरभुरी हो जाती है और हवा व बरसात से मृदा का कटाव बढ जाता है।
- ➢ ग्रीष्मकालीन जुताई के बाद खेत के चारों ओर एक ऊंची मेड़ बनाने से वायु तथा जल द्वारा मृदा के क्षरण की यदि कोई आशंका हो, तो वह भी समाप्त हो जाती है तथा खेत वर्षा जल सोख लेता है।

ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई के लिए मुख्यतः प्रयोग किये जाने वाले यंत्र – **एम. बी. प्लाऊ** – यह एक ट्रैक्टर चालित कृषि यंत्र है जिसमे शेयर पाइंट, शेयर, मोल्ड बोर्ड, लैंड स्लाइड, फ्रॉग, शेंक, फ्रेम और थ्री पॉइंट हीच सिस्टम होते है। प्लाऊ का कार्य ट्रैक्टर की थ्री पॉइंट लिंकेज एवं हाइड्रोलिक सिस्टम द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इसके बार पॉइंट प्लाऊ को मिट्टी की सख्त सतह को तोडने में सक्षम बनाते है। इसके द्वारा फसल अवशेषों को काटकर पूरी तरह से मिट्टी मे दबा देता है।

**डिस्क प्लाऊ** – डिस्क प्लाऊ में एक साधारण फ्रेम, डिस्क बीम असेम्बली, रॉक शाफ्ट, एक भारी सिंप्रग फरो व्हील और गेज व्हील शामिल होते है। डिस्क के कोण 40 से 45 डिग्री तक वांछित कटाई की चौड़ाई के अनुसार तथा खुदाई के लिये 15 से 25 डिग्री तक व्यवस्थित किए जा सकते हैं। प्लाऊ की डिस्क उच्च कोटि के इस्पातीय लोहे द्वारा या सामान्य लोहे द्वारा निर्मित होते हैं तथा उनकी धार सख्त तथा पैनी होती है। डिस्क टेपर्ड रोलर बेरिंग पर लगी होती है। स्क्रेपर चिकनी मिट्टी में डिस्क पर मिट्टी जमने से बचाते हैं। यह सूखी कड़ी घास तथा जड़ों से भरी हुई जमीन की जुताई के लिए उपयुक्त होता है।

**सब–सॉयलर** – लगातार खेत को कम गहरे तक जुताई करने से खेत के नीचे की जमीन कठोर हो जाती है, जिस कारण जड़ें ज्यादा फैल नहीं पाती और फसल की पैदावार में कमी आती है। अतः सब–सॉयलर द्वारा हमें 2–3 साल में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। सब–सॉयलर उच्च कार्बन स्टील से बनी बीम, बीम सपोर्ट जो ऊपर तथा नीचे के किनारों की ओर से बाहर निकले होते हैं, हॉलो स्टील अडाप्टर जो बीम के निचले छोर के साथ जुड़ा होता है और स्क्वेयर सेक्शन शेयर बेस को समायोजित करता है, उच्च कार्बन स्टील की शेयर प्लेट एवं शंक जो सेट बोर्ड लगाने हेतु ड्रिल और काउन्टर बोअर किया गया होता है और उसका बेस एडाप्टर द्वारा सुरक्षित होता है। शेयर प्लेट उच्च कार्बन स्टील द्वारा निर्मित होती है जिसे गलाकर उपयुक्त कठोर बनाया गया होता है।

**कल्टीवेटर** – कल्टीवेटर एक अत्यंत बहुपयोगी उपकरण है क्योंकि इसे ग्रीष्मकालीन जुताई के साथ ही द्वितीयक जुताई के लिए भी इस्तेमाल किया

जा सकता है। इसे सीडड्रिल के लिए रूपांतरित किया जा सकता है। शोवेल (कुसिया) कल्टीवेटर केवल सूखी स्थिति में इस्तेमाल किया जाता है क्योंकि मिट्टी को पलटने की बजाए यह मिट्टी को चीरता है और खरपतवार को काटकर और नोंचकर यह उन्हें सतह पर ला छोड़ता है। स्वीप की चौड़ाई 50 मिमी से 500 मि.मी. तक हो सकती है। इस कल्टीवेटर का वहां इस्तेमाल किया जाता है जहां फसल के अवशेषों को सतह पर लाकर छोडने की जरूरत होती है। ये हल 3–प्वाइंट लिंकेज माउंटेड या ट्रेलिंग वर्जन के रूप में कॉनफिगर किया जा सकता है।

**निष्कर्ष :** किसान भाईयों, खेत की ग्रीष्मकालीन जुताई करने से निश्चित ही आने वाली खरीफ मौसम की फसलें न केवल कम पानी में हो सकेगी बल्कि वर्षा कम होने पर भी फसल अच्छी हो सकेगी तथा खेत से उपज भी अच्छी मिलेगी तथा खर्चे की लागत भी कम आयेगी तथा आय में बढ़ोतरी होगी।

# मोरिंगा का जैविक मुर्गी पालन में महत्व

**डॉ. हितेश मुवाल1, डॉ. लोकेश गुप्ता2, डॉ. एच.एल. बुगालिया3 डॉ. विनोद भटेश्वर4 और डॉ. बसंत कुमार भींचर4**

**1वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता, शुष्क भूमि कृषि अनुसंधान केंद्र, भीलवाड़ा, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर- 313001, राजस्थान, भारत**

**2आचार्य व अधिष्ठाता, डेयरी और खाद्य प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर- 313001, राजस्थान, भारत**

**3सहायक आचार्य, पशु उत्पादन विभाग, राजस्थान कृषि महाविधालय, भीलवाड़ा, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी उदयपुर- 313001, राजस्थान, भारत**

**4सहायक प्रोफेसर, पशुधन उत्पादन प्रबंधन विभाग, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर- 303329, राजस्थान, भारत**

**परिचय :** आज विश्व स्तर पर जैविक कृषि की चर्चा हो रही है। मानव जनसंख्या विश्व स्तर पर दिन–ब–दिन बढ़ती जा रही है। जनसंख्या विस्फोट कृषि उद्योग पर अब तक अज्ञात दबाव डालता है तथा पशु प्रोटीन की बढ़ती मांग को पूरा करना और मानव को सुरक्षित भोजन प्रदान करना जो कि हर्बल फीड संसाधनों का उपयोग करके एंटीबायोटिक से मुक्त भोजन हो और अत्यधिक पौष्टिक मोरिंगा संयंत्र रणनीतिक रूप से इस लिहाज से एक प्रमुख भूमिका निभाने के लिए तैयार है। मुर्गी पालन के लिए अपरंपरागत प्राकृतिक फ़ीड पूरक लागू करना, जो मुर्गियों के स्वास्थ्य के साथ–साथ उत्पादन प्रदर्शन में सुधार के लिए संभावित उपचारों में भूमिका निभा सकता है। आधुनिक भारत में कुक्कुट उत्पादन क्षेत्र पिछली चार शताब्दी से आर्थिक क्षेत्र में मिश्रित, वैज्ञानिक और जैविक उद्योग है, भारत में पोल्ट्री उत्पादन ज्यादातर सीमांत और छोटे किसान द्वारा किया जाता है, इसलिए भारत में ग्रामीण स्तर पर जैविक पोल्ट्री उत्पादन के साथ–साथ आय बढ़ाने के लिए रोजगार के अवसर दे देने पर जोर दिया जा रहा है। वर्तमान समय में देश में कुल पोल्ट्री वर्ष 2019 में 851.81 मिलियन है, कुल पोल्ट्री में 16.8 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है। देश में बैकयार्ड पोल्ट्री में कुल पक्षियों की संख्या 317.7 मिलियन है। पिछली जनगणना की तुलना में बैकयार्ड पोल्ट्री में लगभग 46 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

मोरिंगा जानवरों एवम जैविक पोल्ट्री उत्पादन के लिए फ़ीड पूरक के रूप में बहुत उपयोगी है, क्योंकि इसकी पत्तियां अत्यधिक पौष्टिक होती हैं, इसे ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अध्ययन ओलीफेरा के प्रातिक फ़ीड पूरक के साथ–साथ एंटीबायोटिक दवाओं के विकल्प के रूप में उपयोग पर केंद्रित है जो मुर्गियों के प्रदर्शन और स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार कर सकता है।

**सहजना के पोषक गुण :** फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम और मैग्नीशियम जैसे मैक्रोन्यूट्रिएंट पोल्ट्री और पशुधन की शारीरिक, चयापचय और जैव रासायनिक प्रक्रियाओं को संतुलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। चूंकि मोरिंगा की पत्तियां प्रोटीन से भरपूर होती हैं, इसलिए इसे दुधारू पशुओं और जैविक पोल्ट्री उत्पादन के लिए पूरक चारे के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके अलावा, पत्तियों में कई कवक प्रजातियों जैसे ई कोलाई के खिलाफ एंटीऑक्सीडेंट और एंटीमाइक्रोबायल गुण होते हैं।

**मोरिंगा ओलीफेरा पत्ती की पोषण संबंधी विशेषताएँ और खाद्य पदार्थों के लिए इसका संभावित उपयोग।**

| क्र.सं. | संयोजन | पोषक (तत्व शुष्क पदार्थ आधार) |
|---|---|---|
| 1. | शुष्क पदार्थ | 93.63 प्रतिशत से 95.0 प्रतिशत |
| 2. | कच्चा प्रोटीन | 17.01 प्रतिशत से 22.23 प्रतिशत |
| 3. | कच्चा रेशा | 6.77 प्रतिशत से 21.09 प्रतिशत |
| 4. | कार्बोहाइड्रेट | 63.11 प्रतिशत से 69.40 प्रतिशत |
| 5. | कुल वसा | 2.11 प्रतिशत से 6.41 प्रतिशत |
| 6. | कुल राख | 7.96 प्रतिशत से 8.40 प्रतिशत |
| 7. | सिलिका | 1.02 प्रतिशत |
| 8. | कैल्शियम | 0.8 प्रतिशत |
| 9. | फॉस्फोरस | 0.28 प्रतिशत |
| 10. | सकल ऊर्जा | 14.79 (मैगाजूल / किलोग्राम) |

मैग्नीशियम (0.51 प्रतिशत), पोटेशियम (1.43 प्रतिशत), सोडियम (0.24 प्रतिशत), कॉपर (8.78 पीपीएम), जिंक (18.05 पीपीएम), मैंगनीज (35.57 पीपीएम) और आयरन (474.25 पीपीएम), टोटल फिनोल कंपाउंड (4.25 मिलीग्राम / ग्राम), टोटल फ्लेविनोइड्स (0.23 मिलीग्राम / ग्राम), टैनिस (0.28 मिलीग्राम / ग्राम), पॉलीस्केरिडे ( 20.9 मिलीग्राम / ग्राम)।

**मोरिंगा की चारा कटाई और उत्पादन क्षमता**

- ➢ बरसात के मौसम में फसल को 4 से 6 सप्ताह के अंतराल पर 150 सेमी की ऊंचाई पर काटने से सबसे अधिक उपज मिलती है एवं शुष्क मौसम में 12 सप्ताह की कटाई अंतराल 100 सेमी की ऊंचाई के साथ उच्चतम बायोमास उपज देता है।
- ➢ मोरिंगा का पौधा फसल बुवाई के 85–90 दिन बाद पहली कटाई के लिए तैयार हो जाती है। इष्टतम चारा उत्पादन, बेहतर पुनर्जनन और फसल की दीर्घकालिक स्थापना सुनिश्चित करने के लिए फसल को जमीनी स्तर से 30 सेमी ऊपर काटें।
- ➢ प्रत्येक कटाई के बाद 30 किलो नाइट्रोजन उर्वरक प्रति हेक्टेयर डालें और फसल में तेजी से वृद्धि के लिए सिंचाई करें। मोरिंगा हरे चारे की उपज लगभग 100–120 टन / हैक्टेयर / वर्ष देता है।

**मोरिंगा के प्रसार और रोपण विधि**

मोरिंगा को बीज के साथ–साथ स्टेम कटिंग के माध्यम से भी प्रचारित किया जा सकता है। हालांकि, मोरिंगा के प्रसार के लिए बीज सबसे विश्वसनीय और त्वरित तरीका है।

भारत में, सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थानों ने कुछ सब्जी उद्देश्य किस्मों का विकास किया जैसे कि केएम 1, धनराज, केडीएम 1, पीकेएम 1 और पीकेएम 2 जिसे चारे की खेती के लिए भी उगाया जा सकता है।

**मोरिंगा का ब्रॉयलर के वजन और मांस की गुणवत्ता पर प्रभाव**

- ➢ मोरिंगा लीफ मील को मुर्गियों के आहार में शामिल करने से मांस में फैटी एसिड प्रोफाइल में सुधार होता है और ब्रॉयलर के स्तन की मांसपेशियों में लिपिड ऑक्सीकरण को कम करते हैं तथा साथ ही मोरिंगा के पत्तों में संतृप्त फैटी एसिड की उपस्थिति के कारण मांस की फैटी एसिड प्रोफाइल में सुधार होता है।

- मोरिंगा लीफ मील टिबिया की हड्डी की विशेषताओं पर कोई प्रभाव नहीं डालता है लेकिन शरीर के वजन और फ़ीड खपत अनुपात में सुधार कर सकता है।

**मुर्गी पालन में मोरिंगा से होने वाले स्वास्थ्य लाभ**

- मोरिंगा लीफ मील मुर्गियों में शुगर लेवल को बैलेंस करना और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर के कारण रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार होता है।
- पोल्ट्री में किडनी और लीवर की कार्यप्रणाली में सुधार होता है।
- पोल्ट्री पक्षियों में संक्रामक सर्दी को नियंत्रित करने के लिए मोरिंगा की पत्तियों का रस निकालकर मौखिक रूप से दिया जा सकता है।

**अंडा पैदा करने वाली मुर्गी में मोरिंगा की भूमिका**

- पोल्ट्री में अंडे के उत्पादन, अंडे के वजन और चारे के सेवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है लेकिन अंडे के छिलके की मोटाई और हॉफ यूनिट में सुधार होता है।
- अंडे की जर्दी में उच्च "–कैरोटीन, क्वेरसेटिन और सेलेनियम में सुधार होता है लेकिन अंडे के आकार सूचकांक और अंडे की जर्दी सूचकांक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
- मोरिंगा फ़ीड द्वारा मुर्गी अंडे की जर्दी में उच्च पोषक तत्व और अंडे के सीरम में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करती है।

**जैविक मुर्गी पालन में मोरिंगा का प्रयोग**

- ताजा हरे और बिना क्षतिग्रस्त परिपक्व मोरिंगा के पत्तों को ठीक से हवा में सुखाया जाता है और फिर सूखे पत्तों को एक हथौड़ा चक्की में एक महीन पाउडर के रूप में पीसकर मोरिंगा लीफ पाउडर को मुर्गीपालन के मुख्य फ़ीड के साथ मिश्रित कर खिलाया जा सकता है।

**मोरिंगा पौधे के विभिन्न उपयोगी भाग।**

- ताजे परिपक्व मोरिंगा के बीजों को हवा में सुखा कर और महीन पाउडर पीसकर मोरिंगा के बीज पोल्ट्री फीड भोजन के रूप में उपयोग किया जा सकता है।
- कुछ प्रयोगों मे पाया गया कि मोरिंगा के पिसे हुए कणों को 24 घंटे के लिए आसुत जल में भिगो कर और फ़िल्टर किए गए जलीय घोल को मोरिंगा अर्क के रूप में उपयोग किया जा सकता है तथा पोल्ट्री को प्रतिदिन एक बार 3 लीटर पानी में 100 ग्राम मोरिंगा की पत्ती का अर्क मिलाकर पिलाने से लू लगने पर नियंत्रण किया जा सकता है।
- मोरिंगा के पत्तों के पाउडर का उपयोग पोल्ट्री फीड में 12 –15 ग्राम / किलोग्राम की दर से किया किया जा सकता है। इससे ब्रायलर के स्तन की मांसपेशियों में पीएच, जल धारण क्षमता और मांसपेशी फाइबर व्यास, अधिक वजन, राख प्रतिशत और टिबिया की हड्डी का घनत्व बढ़ सकता है।

अध्ययन ने सुनिश्चित किया कि ब्रॉयलर मुर्गियों के आहार में खिलाए गए मोरिंगा पत्ती के उच्च स्तर (15 प्रतिशत और 20 प्रतिशत पर) के साथ मांस में कुल कोलेस्ट्रॉल का स्तर कम था।

डॉ. सुदेश कुमार
प्रसार शिक्षा निदेशक

### निदेशक की कलम से

## मई माह में कृषि कार्य

प्रिय किसान भाईयों,

1. ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करने से जमीन के हानिकारक कीट, रोगाणु एवं सूत्रकृमि जमीन की सतह पर आकर तेज धूप में नष्ट हो जाते हैं। इस तरह आगामी खरीफ की फसल में कीट एवं रोगों का प्रकोप कम हो जाता है। अतः ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें।
2. जायद मूंग में दाना बनते समय हल्की सिंचाई करें। फलियों को चटखने से पहले तुड़ाई कर लेनी चाहिए।
3. कुष्माण्ड कुल की सब्जियों जैसे लौकी, कद्दू, तुरई, टिण्डा इत्यादि में फूल एवं फल गिरने की समस्या बार–बार तापमान में परिवर्तन एवं अनियमित तथा अधिक सिंचाई के कारण होती है। अतः इन फसलों में नियमित एवं हल्की सिंचाई करें तथा वृद्धि नियामक प्लेनोफिक्स का 3.0 मि.ली. प्रति 15 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
4. नींबू के डाइबैक से ग्रसित पौधों में सूखी टहनियां काटें एवं कटे हुए भाग पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का पेस्ट लगावें। पौधों पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम या मैन्कोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
5. फूलगोभी की अगेती किस्मों जैसे अर्ली पटना या अर्ली कुंवारी की नर्सरी में बुवाई करें। एक हैक्टेयर क्षेत्र के लिए 600–750 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है।
6. पपीते की नर्सरी तैयार करने के लिए हनीड्यू, कुर्ग, हनीड्य, पूसा डिलियसिस, पूसा नन्हा एवं सी.ओ.–2 किस्मों का चयन करें। पपीते की पौध तैयार करने के लिये जुताई करके खाद डालकर खेत में ऊँची उठी क्यारियां तेयार करें। बीजों को 10 सेन्टीमीटर की कतारों में 2 सेन्टीमीटर की दूरी पर लगभग 1–1.5 सेन्टीमीटर की गहराई पर बुवाई करें।
7. तरबूज व खरबूजे के फलों को पकने पर तुड़ाई करें। फल के पास के तन्तु का सूखना, बजाने पर थोथी आवाज आना आदि फलों के पकने का संकेत है। पानी देने के 12–14 घण्टों तक फलों की तुड़ाई न करें।
8. पशुओं को गलघोटू, लंगड़ा बुखार व फड़किया से बचाव के लिए टीके अवश्य लगवायें। पाईका ग्रस्त पशुओं के कीड़े मारने की दवा देकर लवण मिश्रण आहार प्रदान करें।


| | | |
|---|---|---|
| प्रमुख संरक्षक | : | डॉ. बलराज सिंह |
| संरक्षक | : | डॉ. सुदेश कुमार |
| प्रधान सम्पादक | : | डॉ. सन्तोष देवी सामोता |
| | | श्री बी. एल. आसीवाल |
| | | डॉ. बसन्त कुमार भींचर |
| तकनीकी परामर्श | : | डॉ. एम.आर. चौधरी |
| | | डॉ. आर. पी. घासोलिया |
| | | डॉ. डी. के. जाजोरिया |


बुक पोस्ट

डाक
टिकट

पत्रिका सम्बन्धी आप अपने सुझाव, आलेख एवं अन्य कृषि सम्बन्धी नवीनतम जानकारियाँ हमारे मेल jobnerkrishi@sknau.ac.in पर भेजे।

प्रकाशक एवं मुद्रक : निदेशालय, प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के लिए अम्बा प्रिन्टर्स, जोबनेर से मुद्रित।